**प्रकाशन हेतु अनुमोदित**

**छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर**

**एकलपीठ : माननीय श्री एस.आर. नायक, मुख्य न्यायाधीश**

**रिट याचिका क्रमांक : 3318 / 1999**

**याचिकाकर्ता** किशनचंद जैन, पिता श्री बुद्धूलाल जैन, उम्र लगभग 50 वर्ष, स्वामी – जैन बस सर्विस, पेंड्रा, जिला बिलासपुर, म.प्र.

**विरुद्ध**

**उत्तरवादी** क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी–सह– कर अधिकारी, म.प्र. मोटरयान कराधान अधिनियम, 1991 के अंतर्गत, बिलासपुर, म.प्र.

---

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

**उपस्थित:–** याचिकाकर्ता की ओर से – श्री पी.के.सी. तिवारी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, सह श्री अविनाश मिश्रा, अधिवक्ता।

उत्तरवादी की ओर से – श्री संजय एस. अग्रवाल, विद्वान शासकीय अधिवक्ता तथा श्री उत्कर्ष वर्मा, विद्वान उप शासकीय अधिवक्ता।

---

**<u>मौखिक आदेश</u>)**

**(दिनांक 05 मई, 2006 को पारित)**

1. याचिकाकर्ता एक परिवहन बस–ऑपरेटर है, जो "जैन बस सर्विस", पेंड्रा, जिला–बिलासपुर के नाम से अपना व्यवसाय संचालित करता है। सुसंगत समय में, याचिकाकर्ता के पास बस पंजीयन क्रमांक MP 26–B–4142 के संबंध में पेंड्रा रोड से नागपुर मार्ग पर नियमित स्टेज–कैरिज परमिट क्रमांक S.C.P. 294 B–96 था। उक्त मार्ग पर उक्त बस का परिचालन करते समय, यह कथन किया गया है कि दिनांक 31–12–1998 को उक्त बस में कुछ तकनीकी खराबी/दोष

उत्पन्न हो जाने के कारण वह बस अनुपयोगी (नॉन–फंक्शनल) हो गई। इस परिस्थिति में, याचिकाकर्ता ने मोटर यान अधिनियम, 1988 (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 83 एवं मोटर यान नियम, 1994 (संक्षेप में "नियम") के नियम 74 के अंतर्गत निर्धारित प्रपत्र "I" में उक्त बस के स्थान पर अपनी स्वामित्व वाली अन्य बस, जिसका पंजीयन क्रमांक उसने आवेदन में उल्लेखित किया, को प्रतिस्थापित करने हेतु क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी–सह–कर अधिकारी, जो कि मध्यप्रदेश मोटरयान कराधान अधिनियम, 1991 (संक्षेप में "अधिनियम") के अंतर्गत उत्तरदायी है, के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया। उक्त आवेदन की प्रति याचिका की सामग्री पत्रक के पृष्ठ 10 पर संलग्न परिशिष्ट P/2 के रूप में संलग्न है। तत्पश्चात, जैसा कि याचिका के सामग्री पत्रक के पृष्ठ 11 पर संलग्न परिशिष्ट P/3 से परिलक्षित होता है, याचिकाकर्ता द्वारा निर्धारित कर जमा कर दिया गया था, किन्तु उत्तरवादी द्वारा नियम 74 के उप–नियम (2) के अधीन आवश्यक आदेश पारित नहीं किया गया। प्रकरण 10–01–1999 को जब आया, जब प्रतिस्थापित बस का परिचालन किया जा रहा था, उक्त बस का निरीक्षण किया गया। निरीक्षण के दौरान यह पाया गया कि बस बिना वैध परमिट के चलाई जा रही थी। इस कारण याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रकरण पंजीबद्ध किया गया तथा दिनांक 16–02–1999 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया। याचिकाकर्ता ने दिनांक 04–03–1999 को अपने प्रत्युत्तर में यह स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया कि उसकी बस क्रमांक MP 26–B–4142, जिसके संबंध में पेंड्रा रोड से नागपुर मार्ग हेतु परमिट स्वीकृत था, चालू अवस्था में नहीं थी, अतः उसने दिनांक 31–12–1998 को उत्तरवादी के समक्ष उक्त बस के स्थान पर अन्य बस पंजीयन क्रमांक CIL–5222 के प्रतिस्थापन की अनुमति हेतु आवेदन प्रस्तुत किया था। इसके उपरांत, उत्तरवादी द्वारा दिनांक 18–05–1999 को आदेश पारित किया गया, जिसकी प्रति याचिका पत्र के सामग्री पत्रक के पृष्ठ 21 पर परिशिष्ट P/9 के रूप में संलग्न है, जिसके माध्यम से अधिनियम के अनुसूची–I, अनुच्छेद (C) के अनुसार याचिकाकर्ता पर रुपये 50,000/– कर अधिरोपित किया गया। उपरोक्त आदेश से ब्यथित होकर, यह याचिका प्रस्तुत की गयी है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

2. उत्तरवादी द्वारा प्रत्युत्तर प्रस्तुत कर याचिका का विरोध किया गया। उत्तरवादी द्वारा अपने आक्षेपित आदेश के पक्ष में केवल यही प्रतिरक्षा प्रस्तुत की गई कि याचिकाकर्ता को, मोटर यान

अधिनियम की धारा 83 तथा नियम 74 के अंतर्गत दिनांक 31–12–1998 को प्रस्तुत अपने आवेदन पर उत्तरवादी द्वारा आदेश पारित किए जाने की प्रतीक्षा किए बिना प्रतिस्थापित बस का परिचालन नहीं करना चाहिए था। इसके अतिरिक्त यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ता ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत इस माननीय न्यायालय की शरण ली है, जबकि याचिकाकर्ता को अधिनियम के नियम 20 में प्रदत्त वैकल्पिक वैधानिक उपचार का पहले प्रयोग करना चाहिए था।

3. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के तर्क सुने। याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित श्री पी.के.सी. तिवारी, वरिष्ठ अधिवक्ता, ने दृढ़ता पूर्वक यह तर्क प्रस्तुत किया कि वाद की परिस्थितियों एवं तथ्यों के आलोक में आक्षेपित कर का मांग पूर्णतः मनमाना, अवांछनीय तथा संविधान के अनुच्छेद 14 की कसौटी पर स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है। श्री तिवारी ने इस तथ्य को विशेष रूप से रेखांकित किया कि याचिकाकर्ता ने दिनांक 01–01–1999 को छुपाकर/गोपनीय रूप से परमिटधारी बस को बदलकर कोई नई बस प्रतिस्थापित नहीं की थी, और ना ही याचिकाकर्ता ने उत्तरवादी को सूचित किए बिना अथवा आवश्यक कर जमा किए बिना ऐसा कोई कृत्य किया था। श्री तिवारी ने यह भी इंगित किया कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत आवेदन में स्पष्ट रूप से यह निवेदन किया गया था कि अधिनियम की धारा 83 तथा नियम 74 के अधीन बस के प्रतिस्थापन की अनुमति दिनांक 01–01–1999 से प्रभावी करने हेतु याचना की गई थी, न कि दिनांक 14–01–1999 से। इसके विपरीत, शासकीय अधिवक्ता ने प्रत्युत्तर में प्रस्तुत किए गए वही तर्कों को पुनः दोहराया गया ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. यह सुस्थापित विधि है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत प्रदत्त उपचार एक विवेकाधीन उपचार है तथा उच्च न्यायालय के पास सदैव यह अधिकार रहता है कि वह कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में, भले ही किसी विधिक अधिकार का हनन हुआ हो, ऐसे राहत प्रदान करने से इन्कार कर सकता है। वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता ऐसे ही एक महत्वपूर्ण तत्व है जिसे उच्च न्यायालय अपने विवेकाधीन अधिकार का प्रयोग करने से इंकार करने के पूर्व ध्यान में रख सकता है। इस नियम के पीछे का उद्देश्य स्पष्ट और स्वाभाविक है। उच्च न्यायालय राज्य स्तर पर सर्वोच्च न्यायिक संस्थान होते हैं, इसलिए यह अपेक्षित है कि यदि किसी पक्षकार के पास किसी विधि

द्वारा या अधिकारिता रखने वाले व्यवहार न्यायालय में कोई वैकल्पिक, पर्याप्त और समान रूप से प्रभावी उपचार उपलब्ध है, तो उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अंतर्गत असाधारण विवेकाधीन अधिकार का प्रयोग करने से इंकार कर सकता है और ऐसे पक्षकार को पहले वैकल्पिक उपचारों का प्रयोग करने का निर्देश दे सकता है। किन्तु यह स्मरण रखना आवश्यक है कि वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता, अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट प्रदान करने के मार्ग में कोई पूर्ण निषेध नहीं है। यह केवल नीति और व्यवहार का नियम है, विधि का नियम नहीं। यह अधिकारिता (Jurisdiction) का प्रश्न नहीं, बल्कि विवेकाधीन प्रश्न है। अतः अपवादस्वरूप मामलों में, भले ही वैकल्पिक उपचार उपलब्ध हो और उसका उपभोग न किया गया हो, फिर भी रिट जारी किया जा सकता है। इस संदर्भ में उच्चतम न्यायालय द्वारा *उत्तर प्रदेश राज्य विरुद्ध मोहम्मद नूह*[1] के मामले में व्यक्त निम्नलिखित टिप्पणियां सुसंगत हैं—

> यह तथ्य कि पीड़ित पक्षकार के पास अन्य पर्याप्त वैधानिक उपचार उपलब्ध है, उच्च न्यायालय यह निर्णय लेते समय ध्यान में रख सकता है कि क्या उसे अपने विवेकाधीन अधिकार का प्रयोग करते हुए अधीनस्थ न्यायालयों के कार्यवाही या निर्णय को रद्द करने के लिए उत्प्रेषण रिट जारी करनी चाहिए। सामान्यतः उच्च न्यायालय हस्तक्षेप करने से इंकार कर देता है जब तक कि पीड़ित पक्षकार वैधानिक उपचारों का प्रयोग नहीं कर लेता। किंतु यह नियम कि रिट प्रदान करने से पूर्व वैधानिक उपचारों का प्रयोग आवश्यक है, विधि का अनिवार्य नियम नहीं, बल्कि नीति, सुविधा और विवेक का नियम है।
>
> (बल दिया गया)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अतः यह स्पष्ट है कि जब वैकल्पिक उपचार उपलब्ध हो, उस स्थिति में रिट अधिकारिता के अपवर्जन का नियम कोई अनिवार्य या बाध्यकारी नियम नहीं है, बल्कि यह एक विवेकाधीन सिद्धांत है। यह सुस्थापित है कि जब वैधानिक उपचार असाधारण परिस्थितियों की आवश्यकताओं को पूरा करने में पूरी तरह अनुपयुक्त हों — जैसे, जब स्वयं अधिनियम की शक्तिमत्ता पर प्रश्न उठता हो, या जब निजी और सार्वजनिक अधिकारों का हनन इस प्रकार जुड़ा हो कि सार्वजनिक क्षति को रोकने तथा सार्वजनिक न्याय की रक्षा हेतु असाधारण उपचार

1 AIR 1958 SC 86: 1958 SCR 595

आवश्यक हो, या जब कोई आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन करते हुए पारित किया गया हो — तो उच्च न्यायालय, भले ही वैकल्पिक उपचार उपलब्ध हों, रिट याचिका स्वीकार कर सकता है। इसके अतिरिक्त यह भी स्पष्ट है कि यदि वैकल्पिक उपचार पर्याप्त नहीं है (देखिए *हिम्मतलाल विरुद्ध मध्यप्रदेश राज्य*[2] तथा *गणपत रॉय विरुद्ध अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट*[3]), या यदि वह उपचार याचिकाकर्ता की कोई गलती न होते हुए छिन गया हो (देखिए *जिला परिषद् विरुद्ध कुंदन शुगर मिल्स*[4]), या वह उपचार केवल दिखावटी हो (देखिए *राम एवं श्याम का. विरुद्ध हरियाणा राज्य*[5]), या यदि उस उपचार में अत्यधिक विलंब हो (देखिए *भागीरथ सिंह विरुद्ध पंजाब राज्य*[6]), तब भी उच्च न्यायालय रिट याचिका स्वीकार कर सकता है एवं उपयुक्त राहत प्रदान कर सकता है। और इसके अतिरिक्त *बाबूराम विरुद्ध जिला परिषद्*[7] के मामले में यह भी प्रतिपादित किया गया है कि यदि किसी मामले में अधिकारिता का अभाव अथवा अधिकार/विवेकाधिकार का दुरुपयोग हो रहा हो, तो ऐसी स्थिति में भी उच्च न्यायालय वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के बावजूद रिट याचिका स्वीकार कर सकता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

5. यह भी ध्यान देने योग्य है कि वैकल्पिक उपचार का प्रयोग न करना, प्रायः वाद को स्वीकार करने के प्रारंभिक चरण में विचारणीय होता है, और इस न्यायालय द्वारा, यह उचित नहीं होगा कि वाद हेतुक को स्वीकार करने के कई वर्षों उपरांत इस नियम को लागू कर, पक्षकार को वैकल्पिक उपचार अपनाने हेतु वापस भेजा जाए। यह रिट याचिका वर्ष 1999 में दायर की गई थी और यह लगभग छह वर्षों के पश्चात अंतिम सुनवाई हेतु प्रस्तुत हुई है। अतः, इतने लंबे समय के अंतराल के बाद याचिकाकर्ता को यह निर्देश देना कि वह वैधानिक प्राधिकारी के समक्ष अपील के माध्यम से पुनः जाए, पूर्णतः अन्यायपूर्ण होगा। जो भी हो, पक्षकारों के अधिवक्ताओं के तर्क सुनने के पश्चात, मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि आक्षेपित कार्यवाही संविधान के अनुच्छेद 14 की कसौटी पर स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है तथा यह पूर्णतः मनमानी एवं अयुक्तियुक्त प्रतीत होता है।

---

2 AIR 1954 SC 403

3 (1985)2 SCC 307:AIR 1985 SC 1635

4 AIR 1968 SC 98

5 (1985) 3 SCC 267 : AIR 1985 SC 1147

6 AIR 1965 Punj 170

7 AIR 1969 SC 556

सार्वजनिक सड़कों पर बसों के संचालन के लिए कर लगाने का अधिकार रखने वाली प्राधिकृत संस्थाओं से यह अपेक्षित है कि वे अपने विवेक का निष्पक्ष एवं न्यायोचित रूप से प्रयोग करें और वे राजकोष को भरने के उद्देश्य से केवल अधिक से अधिक राजस्व एकत्रित करने की मानसिकता से कार्य नहीं कर सकते। यदि मैं यह कहूँ तो अनुचित न होगा कि आक्षेपित कार्रवाई से मनमानी, अन्याय और अयुक्तियुक्तता की गंध आती है। यह विवादित है कि याचिकाकर्ता के पास पेंड्रा रोड से नागपुर मार्ग पर बस क्रमांक MP 26–B/4142 के संचालन का वैध परमिट था। जब याचिकाकर्ता को यह ज्ञात हुआ कि उक्त बस यांत्रिक खराबी के कारण अनुपयोगी हो गई है और उसमें मरम्मत की आवश्यकता है, तब उसने तत्काल, उसी दिन, अधिनियम की धारा 83 तथा नियम 74 के अंतर्गत उत्तरवादी के समक्ष उक्त बस के स्थान पर दूसरी बस पंजीयन क्रमांक CIL–5222 को प्रतिस्थापित करने हेतु अनुमति के लिए आवेदन प्रस्तुत किया। यहाँ यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि उक्त आवेदन में याचिकाकर्ता ने प्रतिस्थापन की अनुमति उस तिथि से नहीं माँगी थी, जिस तिथि को उत्तरवादी प्राधिकृत आदेश पारित करेगा, बल्कि स्वाभाविक और न्यायसंगत रूप से दिनांक 01–01–1999 से माँगी थी, जिस तिथि से उसने नई बस का संचालन प्रारंभ किया था। उत्तरवादी ने याचिकाकर्ता के आवेदन में किए गए इस निवेदन की पूरी तरह उपेक्षा करते हुए प्रतिस्थापन की अनुमति दिनांक 14–01–1999 से प्रभावी मानी। इसके बीच, यह भी निर्विवादित तथ्य है कि याचिकाकर्ता ने दिनांक 09–01–1999 को प्रतिस्थापन हेतु एवं दिनांक 01–01–1999 से 13–01–1999 तक की अवधि हेतु निर्धारित समस्त करों का भुगतान कर दिया था, जिसका प्रमाण याचिकाकर्ता ने याचिका के सामग्री पत्रक के पृष्ठ 11 पर संलग्न अनुलग्नक P/3 के रूप में प्रस्तुत किया है। केवल इस आधार पर कि दिनांक 10–01–1999 को जांच के समय याचिकाकर्ता के पास अधिनियम की धारा 83 एवं नियम 74 के अंतर्गत उत्तरवादी द्वारा जारी आदेश उपलब्ध नहीं था, जो कि उत्तरवादी प्राधिकरण की देरी के कारण हुआ, उत्तरवादी द्वारा रुपये 50,000/– की मांग करना कोई न्यायोचित एवं वैधानिक आधार नहीं हो सकता। यह भी ध्यान देने योग्य है कि उत्तरवादी का यह भी कोई मामला नहीं है कि प्रतिस्थापित बस, जो पुराने बस के स्थान पर मार्ग पर चलाई जा रही थी, किसी भी प्रकार से यात्रियों के परिवहन के लिए अनुपयुक्त थी। यह तथ्य भी याचिकाकर्ता के पक्ष में जाता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. परिणामस्वरूप, मैं इस रिट याचिका को स्वीकार करता हूँ तथा आक्षेपित कर के मांग को रद्द करता हूँ। हालांकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि याचिकाकर्ता प्रतिस्थापित बस के संबंध में दिनांक 01–01–1999 से 14–01–1999 की अवधि के लिए कर के भुगतान का विधि अनुसार उत्तरदायी है और यदि उक्त कर याचिकाकर्ता द्वारा अब तक भुगतान नहीं किया गया है, तो उत्तरवादी प्राधिकारी को विधि के अनुसार उक्त कर वसूलने की स्वतंत्रता रहेगी। पक्षकारों को वाद व्यय करने संबंधी कोई आदेश नहीं दिया जाता है ।

**हस्ताक्षरित/–**

मुख्य न्यायाधीश.

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

**अस्वीकरणः** हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Prashant Kumar